इकाई 4 - गद्यकवि बाण की कादम्बरी का विस्तृत परिचय

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 गद्य कवि बाण-जीवन एवं कृतित्व
 4.3.1 बाण भट्ट का जीवन परिचय
 4.3.2 बाणभट्ट का स्थितिकाल
 4.3.3 बाणभट्ट का कृतित्व
4.4 बाण की कादम्बरी का विस्तृत परिचय
 4.4.1 कादम्बरी का मूल स्रोत
 4.4.1 कादम्बरी का कथानक
 4.4.3 कादम्बरी के पात्रों का परिचय
 4.4.4 कादम्बरी का कला एवं हृदयपक्ष
4.5 सारांश
4.6 शब्दावली
4.7 बोधप्रश्नों के उत्तर
4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई में आपने प0 राज जगन्नाथ एवं उनकी कृति रसगंगाधर का विस्तृत पिरचय प्राप्त किया। प्रस्तुत इकाई में आप गद्य कवि बाणभट्ट एवं उनकी रचना कादम्बरी का अध्ययन करेंगे। बाणभट्ट तथा उनके द्वारा रचित कथा साहित्य का अनमोल ग्रन्थ रत्न (कादम्बरी) सम्पूर्ण संस्कृत-साहित्य का गौरव बढ़ाता है।

कादम्बरी जैसे अद्वितीय कथा साहित्य के कर्ता के सम्बन्ध में जिज्ञासा की शान्ति के लिए गद्यकवि बाणभट्ट के जीवन-परिचय और उनके कर्तव्य का विवेचन किया जा रहा है। इस इकाई में कादम्बरी का विस्तृत परिचय देते हुए कादम्बरी के विविधरूपों जैसे कादम्बरी का मूलस्रोत कथानक के पात्रों का परिचय आदि को रखा है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप कादम्बरी की कथा के विषय में विस्तार से बता सकेंगे।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- गद्य कवि बाणभट्ट के विषय में सरलता पूर्वक परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- कादम्बरी के विषय में विस्तृत जानकारी दे पायेगें।
- कादम्बरी के अतिरिक्त अन्य गद्यकाव्यों के विषय में भी संक्षिप्त जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- बाणभट्ट की अन्य रचनाओं को समग्र रूप में अध्ययन करने की प्रेरणा प्राप्त हो सकेगी।

4.3 गद्य कवि बाण- जीवन एवं कृतित्त्व

4.3.1 बाणभट्ट का जीवन परिचय

हर्षचरित प्रारम्भिक उच्छवासों से बाणभट्ट के जीवन के सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी मिलती है। वे वत्सगोत्रीय ब्राह्मणकुल में उत्पन्न हुए थे। इनके पिता का नाम चित्रभानु और माता का नाम राजदेवी था। बाण की माता का निधन उनकी वाल्यावस्था में ही हो गया था। बालक बाणभट्ट का पालन-पोषण उनके पिता चित्रभानु ने किया। जब बाण की आयु चौदह वर्षकी थी तभी दुर्भाग्य से उनके पिता का भी देहावसान हो गया। इसके पूर्व ही उनके पिता ने बाण के सभी ब्राह्मणोचित संस्कार यथासमय शास्त्रसम्मत रीति से अपनी कुलपरम्परा के अनुसार सम्पन्न करा दिया था। बचपन में ही बाण के सिर से माता-पिता के हाथों की छाया उठ जाने से बाण अत्यन्त सन्तप्त हो गये किन्तु काल-प्रभाव से जब शोक कम हुआ तो बाण में सहज चपलता पूरी तरह घर कर गयी। पिता, पितामहादि के द्वारा अर्जित और संचित धन-वैभव प्रभूत मात्रा में था। अतः बाण की मित्र-मण्डली खूब जम गयी और वे उन सबके साथ देशाटन के लिए घर से निकल पड़े

। इस तरह विभिन्न स्थलों का भ्रमण करने के पश्चात् वे अपनी जन्मभूमि में वापस आ गये। हर्षचरित के अनुसार, ग्रीष्मकाल में एक दिन महाराज हर्ष के भाई कृष्ण ने बाण को बुलवाया बहुत विचार करके युवक बाण ने वहाँ जाने का निश्चय किया। प्रातःकाल तैयार होकर वे अपने ग्राम प्रीतिकूट से निकले। प्रथम दिन मल्लकूट तथा दूसरे दिन यष्टिग्रहक नामक ग्राम में रात बिताने के पश्चात् तीसरे दिन मणितार के समीप अजिरवती के तट पर स्थित महाराज हर्षदेव के स्कन्धावार में पहुँचे तथा राजभवन के समीप ही निवास किया।

सायंकाल बाणभट्ट महाराज हर्ष से मिलने पहुँचे। प्रथमतः उन्होंने हर्षके हाथी 'दर्पशात' को देखा और तब राजभवन में प्रविष्ट होकर हर्षके दर्शन किये। किन्तु 'यह वही भुजंग बाण है'- कहकर हर्ष ने बाण से बात नहीं की। बाण ने अपनी भुजंगता (लम्पटता) के भ्रम को मिटाने के लिए अपनी ओर से पर्याप्त स्पष्टीकरण दिया किन्तु हर्ष उन पर प्रसन्न न हुए फिर भी हर्ष के प्रति बाण के हृदय में श्रद्धा भर गयी। वे राजभवन से निकलकर अपने मित्रों के यहाँ रूक गये। राजा ने धीरे-धीरे बाण के सम्बन्ध में अच्छी तरह पता किया और उनके वैदुष्य तथा ब्राह्मणोचित स्वभाव से परिचित होने पर प्रसन्न हो गये। पुनः बाण राजभवन में प्रविष्ट हुए तो राजा ने उन्हें प्रेम, मान, विश्वास और धन की पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया। महाराज हर्ष के साथ बहुत समय तक रहकर बाण पुनः अपनी जन्मभूमि प्रीतिकूट को लौट आए।

बाणभट्ट विवाहित थे। बाण के पुत्र का नाम भूषणभट्ट या पुलिनभट्ट था। इस नाम के विषय में ऐकमत्य नहीं है। भूषणबाण, पुलिन्द, पुलिन्ध्र या पुलिन नाम भी कहे जाते हैं। कादम्बरी विषयक एक जनश्रुति के अनुसार बाणभट्ट के दो पुत्र थे। बाण के चन्द्रसेन और मातृशेण नामक दो भाई भी थे। बाणभट्ट के गुरु का नाम भत्सु या भर्वु था। इनके अन्य भी पाठभेद पाये जाते हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि गुरु का सही नाम क्या था? वल्लभदेव की 'सुभाषितावली' में 'भश्चु' द्वारा निर्मित श्लोक उद्धृत किये गये हैं। महाराजा हर्ष के यहाँ लौटने के पश्चात् अपने बन्धु-बान्धवों के आग्रह पर बाणभट्ट ने महाराज हर्षवर्धन का चरित सुनाया था (अर्थात् अपनी अलंकृत गद्य-शैली में 'हर्षचरित' की रचना की)। इसके पश्चात् बाण के शेष जीवन का वृत्त उपलब्ध नहीं होता। हाँ, किंवदन्ती है कि बाण 'कादम्बरी' को पूरी नहीं कर सके थे और मृत्यु-शैया पर पड़ गये। अपने जीवन के अन्तकाल में उन्होंने अपने दोनों पुत्रों को बुलाकर पूछा कि कादम्बरी कौन पूरी करेगा ? दोनों पुत्रों ने इसके लिए हामी भरी। तब उन्होंने कादम्बरी के अनुरुप भावकल्पना और भाषा-प्रयोग के सम्बन्ध में परीक्षा लेकर भूषणभट्ट या पुलिनभट्ट को कादम्बरी पूर्ण करने की आज्ञा दी।

बाण का समृद्ध ब्राह्मण-परिवार में पैदा हुए थे। महाराज हर्ष ने भी उन्हें पर्याप्त धन प्रदान किया था। अतः भोग-ऐश्वर्य की प्रचुर सामग्री उन्हें उपलब्ध थी। इस तरह उन्हें किसी भी प्रकार का अभाव न था और उनका जीवन आर्थिक दृष्टि से निरापद एवं सुखमय था। बाण और मयूर के सम्बन्ध की चर्चा अनेकत्र प्राप्त होती है। बाण की मित्रमण्डली में स्त्री-पुरुष मिलाकर प्रायः चालीस की संख्या में तरह-तरह के लोग थे। इनमें से एक विषवैद्य 'मयूरक' भी था। मित्रों के नाम और उनके गुण वैशिष्ट्य का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि ये नाम उनके गुणों के

आधार पर रख दिये गये थे (यथा-विषवैद्य मयूरक, पुस्तक-वाचक सुदृष्टि, स्वर्णकार चर्मकर आदि) । किन्तु जिस मयूर के साथ बाण के मैत्री-सम्बन्ध की चर्चा मिलती है, वे हर्ष के सभाकवि के रूप में जाने जाते हैं। कुछ लोग मयूर को बाण का श्वसुर और कुछ लोग साला कहते हैं। प्रभाचन्द्राचार्य द्वारा विरचित 'प्रभावकचरित' में बाण और मयूर का श्लोकबद्ध आख्यान मिलता है। तद्नुसार मयूर ने विद्वान् कवि युवक बाण के साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया था। एक बार बाण अपनी रूठी हुई पत्नी को मना रहे थे चूँकि बाण पद्य-कवि नहीं थे अतः एक श्लोक की तीन पंक्तियाँ ही बराबर दुहरा रहे थे, चौथी पंक्ति नहीं बन पा रही थी। बाहर उनसे मिलने के लिए आये हुए मयूर खड़े थे। उनसे नहीं रहा गया और उन्होंने श्लोक के भावानुरूप चौथी पंक्ति बनाकर ऊँचे स्वर में कह दी। इस पर पिता का स्वर पहचाने बिना बाण की पत्नी ने चौथी पंक्ति बनाने वाले उस व्यक्ति को मान-रस-भंग करने के अपराध के लिये कुष्ठ होने का शाप दे दिया । बाद में अपने पिता को तत्काल कुष्ठ हुआ देखकर उसे बड़ा पश्चाताप हुआ। फिर मयूर ने 'सूर्यशतक' की रचना करके भगवान सूर्य की आराधना की और उनके प्रभाव से कुष्ठ रोग से मुक्त हो गये। मयूर की काव्यात्मक स्तुति का अद्भुत प्रभाव देखकर बाणभट्ट ने भी अपना प्रभाव प्रकट करने के लिए अपने हाथ-पैर काट डाले और देवी चण्डिका की स्तुति की। भगवती की अनुकम्पा से बाण पुनः पूर्ववत् कमनीय भक्तों वाले हो गये। बाणभट्ट द्वारा विरचित 'चण्डीशतक' प्राप्त होता है। 'प्रबन्धचिन्तामणि' में भी इसी प्रकार का बाण-मयूर विषयक आख्यान मिलता है। अन्यत्र भी इस विषय में संकेत प्राप्त होते हैं। आचार्य मम्मट ने भी काव्यप्रकाशमें मयूर के सम्बन्ध में संकेत किया है।

4.3.2 बाणभट्ट का स्थितिकाल

संस्कृत साहित्य के जिन कवियों के स्थितिकाल का निर्धारण अत्यन्त दुष्कर है, महाकवि बाणभट्ट उनमें से नहीं है। अन्तः साक्ष्यों के आधार पर बाणभट्ट के स्थितिकाल का निर्धारण सरलता से हो जाता है। सम्राट हर्षवर्धन के साथ बाणभट्ट का संबंध ऐतिहासिक प्रमाणों से पुष्ट है। बाण, हर्ष की सभा के सम्मानित सदस्य थे। हर्षवर्धन का शासनकाल 606 ई॰ से 647 ई तक था। बाणभट्ट का समय सातवीं शताब्दी ई॰ निश्चित ही है। चीनी यात्री ह्वेनसांग 629 ई॰ से 645 ई॰ तक भरत में रहा और उसने अपने यात्रा-विवरण में हर्षवर्धन और उनकी राज्यव्यवस्था पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। बाण ने भी हर्ष के जीवनवृत्त का कुछ अंश साहित्यिक रीति से हर्षचरित में सन्निविष्ट किया है। दोनों वर्णनों की तात्विक तुलना करने पर सिद्ध होता है कि दोनों द्वारा वर्णित हर्ष एक ही हैं। बाणभट्ट के समय सम्बन्ध में बर्हिःसाक्ष्यों पर दृष्टिपात करना समीचीन होगा। क्षेमेन्द्र (11वीं शताब्दी ई॰) ने अपने रचनाओं में अनेकश: बाण का उल्लेख किया है। भोजराज अपने सरस्वती- कण्ठाभरण में बाण की रचनाओं से उदाहरण देते हैं भोजराज भी 11वीं शताब्दी ई॰ के पूर्वार्द्ध में शासन करते थे ऐसा प्रमाणों से पता चलता है। सोड्ढल ने उदयसुन्दरीकथा में कई श्लोकों में बाण की प्रशंसा की है। सोड्ढल का समय प्रायः 1000 ई॰ है। आचार्य धनंजय (10 वीं शताब्दी ई॰ का उत्तरार्ध) ने कादम्बरी और बाण का

उल्लेख कई बार किया है। धनपाल ने भी 'तिलकमंजरी' वाणभट्ट और उनकी कृतियों-हर्षचरित तथा कादम्बरी की प्रशंसा की है। धनपालका का समय भी 10वीं शताब्दी का उतरार्ध है। त्रिविक्रम भट्ट ने 'नलचम्पू' का रचनाकाल 10वीं शताब्दी ई॰ का पूर्वाद्ध है। आन्दवर्धन-कृत 'ध्वन्यालोक' में बाण और कादम्बरी का उल्लेख हुआ है। उसमें 'हर्षचरित' के भी उद्धरण प्राप्त होते हैं। आनन्दवर्धन कश्मीर नरेश अवन्तिवर्मा के समकालिक थे जिनका शासनकाल 855 ई॰से 884 ई॰ तक था। अभिनन्द का समय नवीं शताब्दी ई॰ का पूर्वार्द्ध है। अभिनन्द ने 'कादम्बरीकथासार' की रचना की है जिसमें कादम्बरी-कथा संक्षेपतः श्लोकबद्ध निबद्ध है। आचार्य वामन ने अपनी'काव्यलंकारसूत्रवृति' में कादम्बरी से उद्धरण दिये हैं। वामन का स्थितिकाल 800 ई॰ के आसपास माना जाता है। प्रकाशवर्ष ने अपने रसार्णवालंकार में बाण का उल्लेख किया है। प्रकाशवर्षका समय सातवीं शताब्दी ई॰ का उत्तरार्ध है।

उपर्युक्त प्रमाणों के आधार पर हमें यह ज्ञात होता है कि बाणभट्ट का उल्लेख तथा उनकी कृतियों से उद्धरणों का प्रयोग सातवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से ही किया जाने लगा था। अतः बाणभट्ट के स्थितिकाल की पूर्व सीमा सातवीं शताब्दी ई॰ के पश्चात् कथमपि नहीं रखी जा सकती। सम्प्रति अन्तः साक्ष्यों का अवलोकन कर उन पर भी विचार कर लेना समीचीन होगा। बाणभट्ट की कृतियों में अनेक लेखकों और ग्रंथों का उल्लेख प्राप्त होता है। कादम्बरी और हर्षचरित में रामायण और महाभारत (वाल्मीकि और व्यास) का उल्लेख हुआ है। ये दोनों आर्ष महाकाव्य निश्चित रूप से ईसा से कई सौ वर्ष पूर्व विरचित हो चुके थे। हर्षचरित में महाकवि (नाटककार) भास का उल्लेख हुआ है। भास का समय ई॰ पूर्व चतुर्थ पंचम शताब्दी माना जाता है। कादम्बरी में 'अर्थशास्त्र' के प्रणेता कौटिल्य का नामोल्लेख किया गया है। अर्थशास्त्र की रचना ई॰ पू॰ 321 से 300 के मध्य की गयी होगी। हर्षचरित में महाकवि कालिदास की सूक्तियों की प्रसंशा बाण ने मुक्तकण्ठ से की है। अधिकांश विद्वान कालिदास का समय ई॰ पू॰ प्रथम शताब्दी मानते हैं। कुछ विद्वान कालिदास को गुप्तकाल (350 ई॰ से 450 ई॰ के मध्य) में मानते हैं। बाणभट्ट ने गुणाढ्यकृत 'बृहत्कथा' का प्रशंसार्य हर्षचरित में की है। 'बृहत्कथा' अब उपलब्ध नहीं है किन्तु बाणभट्ट ने अवश्य ही इसका अवलोकन किया होगा। 'बृहत्कथा' की रचना पैशाची प्राकृत में की गयी थी। 'बृहत्कथा' पर आधारित कथासरित्सागर' (सोमदेव) और 'बृहत्कथामऋजरी' (क्षेमेन्द्र) दो ग्रंथ में पद्यात्मक रूप में उपलब्ध होते हैं। उनसे तुलना करने पर प्रतीत होता है कि बाणभट्ट की 'कादम्बरीकथा' अवश्य ही बृहत्कथा की वस्तु और रचनाशिल्प से प्रभावित है। बृहत्कथा का रचना काल प्रथम शताब्दी ई॰ अनुमानित है। हर्षचरित में ही बाण ने 'सेतुबन्धु' के रचयिता प्रवरसेन का उल्लेख किया है। यह प्रवरसेन वाकाटक वंश के राजा प्रवरसेन द्वितीय हैं, जिनका समय पांचवी शताब्दी ई॰ है।

उपर्युक्त प्रमाणों की समीक्षा करने पर ज्ञात होता है कि बाण ने अपनी रचानाओं में जिन कृतियों और कृतिकारों का उल्लेख किया वे ई॰पूर्व से लेकर पांचवी ई॰ तक के हैं। इससे भी सातवीं

शताब्दी ई०, बाण का स्थिति काल पुष्ट होता है । सबसे पुष्ट प्रमाण तो सम्राट हर्ष की समकालिक होना ही है।

4.3.3 बाणभट्ट का कृतित्व

बाणभट्ट की तीन कृतियां प्रसिद्ध हैं-हर्षचरित, कादम्बरी और चण्डीशतक। प्रथम दो गद्यकाव्य है और तीसरी कृति पद्यकाव्य है। इनके अतिरिक्त भी बाण के नाम से कुछ अन्य ग्रंथ कहे जाते हैं। यहाँ हम क्रमश: बाणभट्ट की कृतियों का परिचय संक्षेपतः प्रस्तुत कर रहे हैं।

हर्षचरित - विदित ही है कि महाकवि बाणभट्ट ने अपने जीवन के अनेक वर्ष सम्राट हर्षवर्धन के समृद्ध आश्रय में व्यतीत किये थे । इसलिए स्वाभाविक है कि हर्ष जैसे महान् सम्राट का गुणकीर्तन उसके आश्रित प्रतिभाशाली विद्वान कवि के द्वारा किया जाय। हर्षचरित, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित एक उच्चकोटि की गद्यकाव्य रचना है जिसे समीक्षकों ने:आाख्यायिका' की कोटि में रखा है। इसमें महाकवि बाण और सम्राट हर्ष के जीवन में कुछ अंशों की अलंकृत गद्यशैली में काव्यात्मक प्रस्तुति है।

हर्षचरित आठ उच्छवासों में विभक्त है। इनके प्रारम्भिक तीन उच्छवासों में कवि वंशानुकीर्तन पूवर्क अपना परिचय तथा शेष पाँच उच्छवासों में अपने आश्रयदाता सम्राट हर्षवर्धन के जीवन का कुछ अंश प्रस्तुत किया है। कुछ विद्वानों की मान्यता है कि हर्षचरित एक अपूर्ण रचना है। किन्तु यदि हम हर्षचरित में बाण के कथनों का अनुशीलन करें तो ज्ञात होगा कि यह एक पूर्ण रचना है।

प्रथम उच्छवास

भगवान शिव और भगवती उमा की स्तुति करने के पश्चात कुकवि निन्दा और सुकवि प्रशंसा करके बाण ने पौराणिक शैली में अपने वंश के उद्भव की मनोरम कथा प्रस्तुत की है। ब्रह्मा की सभा में दुर्वासा से अभिशप्त होकर सरस्वती, सावित्री के साथ नियतकाल के लिए निर्वासित होकर मर्त्यलोक में अवतरित होती है। और शोणन्द के पश्चिमी तट पर एक मनोरम वन प्रान्त में निवास करने लगती है। वहां दैव योग से महर्षि च्वयन और सुकन्याय के पुत्र कुमार दधीच से सरस्वती का सुदंर प्रीतिमय मिलन हुआ। उससे सारस्वत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्रोत्पति के साथ ही शाप समाप्त हो जाने के कारण सरस्वती, सावित्री के साथ ब्रह्मा लोक चली गयी। उदास दधीच ने पुत्र के पालन का भार भार्गव वंशोत्पन्न ब्राह्मण को सौंपा । अक्षमाला ने समान वात्सल्य से दोनो का पालन-पोषण किया। सारस्वत ने वत्स को सभी विद्यायें प्रदान की तथा उसके लिए प्रीतिकूट नामक निवास बना दिया। स्वयं तपस्या के लिए पिता के पास चला गया।

वत्स के कुल में बहुत समय पश्चात कुबेर पैदा हुए । उनके चार पुत्र जिनमें से पाशुपत से अर्थपति नामक पुत्र हुआ। अर्थपति के ग्यारह पुत्र हए जिनमें से चित्रभानु का विवाह राजदेवी से हुआ। इसी दम्पती के पुत्र बाण हुए। राजदेवी का निधन होने के पश्चात् बालक बाण का पालन पिता चित्रभानु ने किया। बाण जब चौदह वर्ष के हुए तो पिता भी दिवंगत हो गये किन्तु इसके पूर्व ही बाण के सारे संस्कार यथाविधि संपन्न हो चुके थे। पितृवियोग का शोक कम होने पर

बाण अपने मित्रों के साथ देशाटन करने निकले और कुछ समय पश्चात् अपने गांव लौटे। बान्धवों ने बाण का अभिनन्दन किया।

द्वितीय उच्छवास - सम्राट हर्ष के भाई कृष्ण के बुलावे पर बाण हर्षसे मिलने गये। हर्षके मन में बाण के प्रति जो कुविचार थे, वे दूर हो गये तथा वे सम्राट के प्रेम-भजन उनके आश्रम में रहने लगे।

तृतीय उच्छवास - पर्याप्त काल हर्ष की सन्निधि में व्यतीत कर बाण प्रीतिकूल में अपने बंधु बान्धवों के बीच उन लोगों के कहने पर उन्होंने महाराज हर्ष का चरित्र सुनाना आरंभ किया। प्रारंभ में उन्होंने हर्ष के पूर्वज श्रीकण्ठ जनपदान्तर्गत स्थणीश्वर प्रदेशके राजा पुष्यभूति का वर्णन किया।

चतुर्थ उच्छवास- पुष्यभूति से प्रवर्तित राजवंशमें हूणहरिणकेसरी राजाधिराज प्रभाकरवर्धन उत्पन्न हुए। आदित्यपूजक उस राजा की पत्नी का नाम यशोमती था। इस दम्पती को राजवर्धन, हर्षवर्धन और राज्यश्री नामक तीन संतान हुई। यशोमती के भाई का पुत्र भण्डिय इन दोनों राजकुमारों के अनुचर के रूप में साथ रहने लगा। दो मालव कुमार-कुमारगुप्त और माधवगुप्त भी इनके सहचर हो गये। राजश्रीदास का विवाह मौखरिवंश के ग्रहवर्मा के साथ हुआ।

पंचम उच्छवास- राजा प्रभाकरवर्धन ने कुमार राज्यवर्धन को हुणों को परास्त करने के लिए उत्तरी सीमा पर भेजा। हर्षवर्धन भी कुछ दूर तक उनका अनुगमन करते रहे किन्तु बाद में आखेट के लिए रूक गये। एक रात उन्होंने दुःस्वप्न देखा और अगले दिन उन्हें पिता की गंभीर रूग्णावस्था का संदेश मिला। वे तुरंत लौटे और पिता की दशा देखकर संतप्त हो गये। राजा ने किसी तरह आलिंगन पूर्वक हर्ष को भोजन के लिए राजी किया। राजा की हालत बिगड़ने लगी। चिकित्सा कर रहे वैद्य ने निराश होकर अग्नि में प्रवेश कर लिया। रानी यशोमती ने भी, हर्ष के लाख मनाने के बावजूद राजा की मृत्यु के पूर्व ही अग्निप्रवेश कर लिया। कुछ देर ही राजा का भी प्राणान्त हो गया। हर्ष षोक-सन्तप्त हो गये और बड़े भाई के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे।

षष्ठ उच्छवास- राज्यवर्धन लौटे और दोनों अत्यंत शोक पूर्वक देर तक रोते रहे। राज्यवर्धन को राज्य से विमुख जानकर हर्ष ने अतिशय विनय कुमार से किया। तभी राज्यश्री का परिचारक आकर रोने लगा कि मालवराज ने ग्रहवर्मा की हत्या करके राज्यश्री को कारागार में डाल दिया है। हर्ष को राज्यभार सौंप कर राज्यवर्धन, भण्डि और दश हजार घुड़सवारों के साथ मालवराज को विनष्ट करने हेतु चल पड़ा। कुछ ही दिनों बाद कुन्तल ने आकर बताया कि राज्यवर्धन ने मालवराज को परास्त कर दिया था किन्तु गौडाधिप ने धोखे से राज्यवर्धन का मार डाला। यह सुनकर हर्ष क्रोध से तमतमा उठा। हर्षने सिंहनाद नाम सेनापति से प्रेरित होकर प्रतिज्ञा की गौडाधिप समेत सभी शत्रुओं का विनाश कर एकच्छत्र राज्य स्थापित करूगाँ। इस अवसर पर गजाधिप स्कन्दगुप्त ने अनेक राजाओं की विपत्तियों का वर्णन किया।

सप्तम उच्छवास - महाराज हर्षवर्धन ने शुभ मुहूर्त में दिग्विजय के लिए प्रस्थान किया। एक पड़ाव पर प्राग्ज्योतिशेश्वर कुमार का दूत आकर उन्हें 'आभोग' नाम छत्र भेंट कर गया और राजा ने कुमार के अनुरोध पर उसे अपना मित्र बना लिया। कुछ समया बाद भण्डि (हर्ष के मामा

का पुत्र) आया और उसने रोते हुए बताया कि राज्यवर्धन की मृत्यु के बाद गुप्त ने कुशस्थल पर अधिकार कर लिया और राज्यश्री कारागार से निकलकर विन्ध्य के वनों में चली गयी है। उसने उसे खोजने के लिए कुछ आदमी लगाये किन्तु सफलता न मिली। तब सोना समेत भण्डि के गौड़ देश का आदेश देकर हर्ष स्वयं राज्यश्री को खोजने चल पड़ा।

अष्टम उच्छवास- वन में कई घूमने के पश्चात् एक शबर युवक की सहायता से हर्ष गिरिनदी के तट पर रहने वाले भिक्षु दिवाकर मिश्र के आश्रम में पहुँचे। दिवाकर मित्र के साथी एक भिक्षु द्वारा तत्काल लाये गये वृत्तान्त को सुनकर वे सभी उस स्थान पर पहुँचे जहाँ एक स्त्री साहस पूर्वक अग्नि प्रवेश करने जा रही थी। हर्ष अपनी बहन राज्यश्री को पहचान गये और उसे पकड़कर बचा लिया। भाई-बहन का यह मिलन अद्भुत कारूणिक था। राज्यश्री ने काशाय ग्रहण करने की आज्ञा हर्ष से मांगी किन्तु हर्ष ने उसे तब तक के लिए मना कर दिया जब तक वह दुःखी प्रजा को शत्रुओं का दमन करके सुखी न कर दे। दिवाकर मित्र ने इसका अनुमोदन किया। रात वहीं आश्रम में व्यतीत की। भाई-बहन दोनों अगले दिन प्रातः काल अपने शिविर को चले गये। हर्ष का इतना ही चरित सुनाते-सुनाते दिवसावसान हो गया।

कादम्बरी- बाणभट्ट द्वारा विचरित यह गद्यकाव्य 'कथा' की कोटि में परिगणित है। इसके संबंध में विस्तृत विवरण आगे प्रस्तुत किया जायेगा।

चण्डीशतक- 102 श्लोकों में निबद्ध भगवती चण्डी की स्तुति बाण विरचित है। देवी महिषासुर का वध करती है- यही इस स्तोत्रकाव्य का कथानक है। अमरूशतक के टीकाकार अर्जुनवर्मदेव चण्डीशतक से श्लोक उद्धृत किया गया है। चण्डीशतक पर चार टीकाओं का उल्लेख मिलता है। यह गंगारथ मार्कण्डेयपुराण के दुर्गासप्तशतीय (देवीमाहात्म्य) से प्रभावित है। इन तीनों प्रसिद्ध रचनाओं के अतिरिक्त बाण के नाम से अन्य भी कई रचनायें जुड़ी हैं। उनका संक्षिप्त विवरण अधोलिखित है-

मुकुटताडिक-चण्डपालकृत नलचम्पू की व्याख्या से ज्ञात होता है कि बाण ने 'मुकुटताडितक' नामक नाटक की रचना की थी। चण्डपाल ने इसका एक पद्य भी उल्लिखित किया है। भोजकृत श्रृंगारप्रकाश में इसका उल्लेख है।

शारदचन्द्रिका-शारदातनयकृत भावप्रकाशन से ज्ञात होता है कि बाण ने 'शारदचन्द्रिका' की रचना की थी।

पार्वतीपरिणय- कुछ विद्वान् गोत्र और नाम साम्य के आधार पर इसे बाणभट्ट की रचना मानते हैं। वस्तुतः यह ग्रंथ पन्द्रहवी शताब्दी ई० के वत्सगोत्रीय वामनभट्टबाण की रचना है।

इनके अतिरिक्त 'पद्यकादम्बरी', शिवस्तुति', 'सर्वचरितनाटक' रचानाओं को भी बाण के नाम से जोड़ा जाता है।

4.4 बाण की कादम्बरी का विस्तृत परिचय

4.4.1 कादम्बरी-कथा का मूल स्रोत

यद्यपि 'कादम्बरी' के प्रथम पात्र 'शूद्रक' के अनेक विद्वान् इतिहास प्रसिद्ध राजा सिद्ध करते है

तथापि कथानक वस्तुतः कविकल्पित (उताद्य) है । गुणाढ्य कृत 'बृहत्कथा' का मकरन्दिकोपाख्यान को कादम्बरी-कथा का मूलस्रोत माना जाता है। बृहत्कथा पैशाची प्राकृत में निबद्ध थी और वर्तमान में अनुपलब्ध है किन्तु बाणभट्ट ने अवश्य ही उसका अवलोकन किया होगा। सम्प्रति बृहत्कथा के दो पद्यात्मक संस्करण प्राप्त होते हैं-सोमदेवकृत कथासरित्सागर और क्षेमेन्द्रकृत बृहत्कथामंजरी। इसके अतिरिक्त 'बृहत्कथाश्लोकसंग्रह' भी प्राप्त होता है। इन तीनों में ही 'मकरन्दिकोपाख्यान' प्राप्त होता है। 'मकरन्दिकोपाख्यान' के पात्रों के नाम कादम्बरी-कथा के पात्रों से भिन्न हैं किन्तु दोनों के ही कथानकों का ढांचा प्रायः मिलता-जुलता है। चूँकि बाण सप्तम शताब्दी ई० के हैं और गुणाढ्य ई० पूर्व चतुर्थ शताब्दी के आस-पास के अतः निश्चय ही कादम्बरी का कथानक बृहत्कथा से प्रभावित है । कादम्बरी-कथा में और कथासिरत्सागर के राजा सुमनस् की कथा में बहुत अधिक समानता है। कथासरितसागर की यह कथा बृहत्कथा में रही होगी। बाण ने कादम्बरी की रचना में इससे प्रेरणा ग्रहण की है। किन्तु अपनी काव्यप्रतिमा, वैदुष्य (पाण्डित्य), उत्प्रेक्षाशक्ति के बल पर उसे पूर्णतः स्पोज्ञ (मौलिक) बना दिया । कादम्बरी के शूद्रक, चाण्डाल-कन्या, वैशाम्पायन (शुक), जाबालि, हारीत, तारापीड, विलासवती, चन्द्रापीड, शुकनास, महाश्वेता, पुण्डरीक और कादम्बरी क्रमश: कथासरित्सागर के सुमनस् मुक्तलता, शास्त्रगप्र, पौलस्त्य, मारीच, ज्योतिष्प्रभ, हर्षवती, सोमप्रभ, प्रभाकर, मनोरथप्रभा, रश्मिवान् और मकरन्दिका हैं। कुछ अन्य गौड़ पात्रों और स्थानों के नाम भी भिन्न हैं।

बाणभट्ट ने अपनी प्रतिभा और रचना-शक्ति से मूलकथा में पर्याप्त परिवर्तन करके कादम्बरी को वैसा ही नवीन रूप दे डाला है जैसे फाल्गुन के महीने में शोभांजन वृक्ष (सहजन या सहिजन का पेड़) नवीन कलेवर धारण कर लेता है। उन्होनें उत्स के रूप में एक सामान्य लोककथा को लेकर उसे संस्कृत वाङ्.मय की उत्कृष्टतम कथा के रूप में प्रस्तुत कर लिया । यह बाण के लोकोत्तरवर्णन निपुण कतिकर्म का ही परिणाम है । उन्होंने अलंकृत गद्य-शैली के आश्रय से काल्पिक प्रणय कथा को अत्यन्त हृदयावर्जन बनाने के साथ ही शुकनासोपदेश जैसे जीवन के व्यावहारिक पक्ष को भी अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। औचित्य और रस के निर्वाह की दृष्टि से मूल कथा में आवश्यक परिवर्तन भी किये गये है।

4.4.2 कादम्बरी का कथानक

संस्कृत गद्य-साहित्य का समुज्ज्वल रत्न 'कादम्बरी' एक कथा-ग्रंथ है । आधुनिक काव्यशास्त्रीय दृष्टि से इसे एक मनोरम 'उपन्यास' कहा जा सकता है। कादम्बरी का कथानक चन्द्रापीड और पुण्डरीक के तीन जन्मों से संबंध है। गद्यकाव्य कादम्बरी का आरंभ पद्यबद्ध रूप से होता है। इन पद्यों के द्वारा महाकवि बाणभट्ट ने अजरूप परब्रह्म, शिव और विष्णु को नमस्कार करने के पश्चात दुजर्न-निन्दा और सज्जन प्रशंसा की है। माननीय कथा का स्वरूप् प्रतिपादित करने के पश्चात् क्रमश: वात्स्यायन वंश में उत्पन्न कुबेर, अर्थपति और अपने पिता चित्रभानु की महिमा का निरूपण कर अन्ततः अपना परिचय दिया है। तत्पश्चात् कथा प्रारंभ होती है।

विदिशा नरेश शूद्रक एक प्रतापी राजा थे। कला-पारखी, गुणज्ञ, गोष्ठी,-प्रिय विद्वान शासक थे। एक दिन एक चाण्डाल कन्या पिंजड़े में वैशम्पायन नाम का तोता लेकर राजा की सेवा में उपस्थित हुई और उसने पक्षिरत्नभूत उस शुक को राजा को उपहार के रूप में समर्पित कर दिया। वैशम्पायन सभी शास्त्रों का ज्ञाता, बुद्धिमान् और मनुष्यवाणी में स्पष्ट बोलने वाला था। उसने अपना दाहिना पैर उठाकर राजा की जयकार की और उनके सम्बन्ध में एक 'आर्या' का पाठ किया। राजा अत्यन्त विस्मित और प्रसन्न हुआ। उसने मध्याह्न भोजन के पश्चात् राजा को कथा सुनायी।
विन्ध्याटवी में अगस्त्य-आश्रम के समीप पम्पा सरोवर है। पम्पा सरोवर के पश्चिम तट पर विशाल सेमलवृक्ष की कोटर में एक वृक्ष पक्षी अपने शावक के साथ रहता था। एक दिन शबरों की सेना भीषण कोलाहल करती हुई उधर से गुजरी। सेना के निकल जाने के पश्चात् एक वृद्ध उस विशाल सेमल के वृक्ष पर चढ़ गया और कोटरों से शुकों को निकला कर मारकर जमीन पर फेंक देता। उसने उस वृद्ध शुक को मारकर फेंक दिया और उसके साथ ही अपने पिता के पंखों में चिपका हुआ वह शिशु शावक भी नीचे गिर पड़ा। पुण्य बाकी रहने के कारण वह सूखे पत्तों के ढेर पर गिरा। शबर के भूमि पर उतरने के पूर्व ही अपने प्राणों के मोह में वह शुकशावक पास के तमाल वृक्ष की जड़ में जाकर छिप गया। वह शबर जमीन पर पड़े शुकों को बटोर कर (लेकर) चला गया। जब प्यास से व्याकुल वह डरा हुआ भी रेंगता हुआ पानी की खोज में धीरे-धीरे चल पड़ा। स्नान करने के लिए सरोवर की ओर जाते हुए जाबालि-पुत्र हारीत की दृष्टि उस पर पड़ी। वे एक ऋषिकुमार के द्वारा शुक-शावक को सरोवर के पास ले गये, उसके मुँह में पानी की कुछ बूँदें डाली हौर स्नान करने के बाद उसे अपने रमणीय आश्रम में ले गये। शुक-शावक को अशोक वृक्ष के नीचे रखकर उन्होंने पूज्य पिता जाबालि का चरण-स्पर्शपूर्वक अभिवादन किया। मुनियों के पूछने पर उन्होंने शुक शावक की प्रगति का वृत्तान्त बतलाया और कहा कि पंख निकलने तक इसे इसी आश्रम में पाला जायेगा। तब महर्षि जाबालि ने शुक-शावक की ओर देखकर कहा कि यह अपने ही अविनय का फल भोग रहा है। यह सुनकर हारीत समेत सभी मुनियों को बड़ा कुतूहल हुआ। उन्होंने उसके रहस्य को जानना चाहा। तब सन्ध्याकालिक कृत्य सम्पन्न करके महर्षि जाबालि ने शुक के पूर्व जन्म का वृत्तान्त बताया।

उज्जयिनी के राजा तारापीड ने अपने योग्य महामन्त्री शुकनास पर समस्त राज्यभार छोड़कर चिरकाल तक यौवन सुख का उपभोग किया। जब आयु अधिक होने लगी और और कोई सन्तान नहीं हुई तो उनकी चिन्ता बढ़ने लगी। एक दिन महारानी विलासवती भी अपनी निःसन्तान के कारण अत्यन्त दुःखी होकर विलाप करने लगी। महाकाल के दर्शनों के लिए गयी हुई महारानी ने वहां हो रही महाभारत की कथा के एक प्रसंग में सुना कि पुत्रहीनों को शुभ लोक नहीं मिलते। महाराज तारापीड ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा कि दैवाधीन वस्तु के लिए सन्तप्त होना उचित नहीं है। गुरु, ऋषि और देवों की अर्चना अपने अधीन है। भक्तिपूर्वक ऐसा करने पर वे प्रसन्न होकर मनोवांछित उत्तम वर देते हैं।
राजा और रानी ने ऐसा ही किया। तारापीड को विलासवती से चन्द्रापीड नामक पुत्र तथा मन्त्री

शुकनास को अपनी पत्नी ब्राह्मणी मनोरमा से वैशम्पायन नामक पुत्र की प्राप्ति हुई। दोनों बालक परस्पर मित्रभाव से साथ ही साथ रहने लगे। दोनों को आचार्यों ने समग्र विद्याओं की शिक्षा दी। विद्या प्राप्त कर चन्द्रापीड इन्द्रायुध नामक अश्व पर सवार होकर वैशम्पायन के साथ राजभवन लौटा और माता-पिता के दर्शन कर आनन्दित हुआ । माता विलासवती ने चन्द्रापीड की ताम्बूलकरंकवाहिनी के रूप में कुलूतेश्वर की पुत्री पत्रलेखा को नियुक्त किया ओर वह कुमार का विश्वास अर्जित कर उनकी सेवा में लग गयी । तारापीड ने चन्द्रापीड को युवराज पद पर अभिसिक्त किया और चन्द्रापीड ने तीन वर्षों में दिग्विजय कर पृथ्वी मण्डल के राज्यों को अपने अधीन कर लिया । यौवराज्यभिषेक से पूर्व मन्त्री शुकनास ने चन्द्रापीड को राजनीति और आचार-व्यवहार की शिक्षा (उपदेश) दी।

किरातों के नगर सुवर्णपुर का जीत कर वह सेना को विश्राम देने के लिए कुछ दिनों के लिए वहां रुक गया। एक दिन उसने एक किन्नर युगल को देखा। कुतूहल वश उनका पीछा करते हुए वह वन में दूर तक निकल गया। किन्नर युगल तो पर्वत शिखर पर चढ़ गया और चन्द्रपीड जल खोजता हुआ अच्छोद सरोवर पर पहुँच गया। वहाँ शिवमन्दिर में वीणा बजाकर तन्मयतापूर्वक शिवाराधन में निरत एक दिव्यकन्या को देखा। बाद में वह उसके साथ बैठकर उसका सारा हाल जानने लगा। उस कन्या का नाम 'महाश्वेता' था और वह गन्धर्वराज 'हंस' तथा अप्सराकन्या गौरी की एकमात्र कन्या थी। एक दिन वह अपनी माता के साथ स्नानार्थ अच्छोद सरोवर पर आयी थी। वहां उसे एक दिव्य सुगन्धि का अनुभव हुआ हौर उस सुगन्धि का अनुसरण कर वह आगे बढ़ी तो मुनिपुत्र पुण्डरीक और कपिंजल से उसकी भेंट हुई। पुण्डरीक ने वह पारिजात मंजरी महाश्वेता को दे दी। दोनों के बीच प्रणय अंकुरित हो गया। दोनों अपने-अपने घर लौट गये और परस्पर वियोग से सन्तप्त रहने लगे। एक दिन कपिंजल ने आकर पुण्डरीक की गम्भीर अवस्था का निवेदन महाश्वेता से किया । अपनी दासी तरलिका के साथ जब महाश्वेता पुण्डरीक को देखने उसके आश्रम पहुँची तब तक उसके प्राण निकल चुके थे। महाश्वेता विलाप करने लगी और आत्मदाह के लिए उसने तरलिका से चिता तैयार करायी । इसी समय चन्द्रमण्डल से एक दिव्य पुरुष उतरा और पुण्डरीक का निर्जीव शरीर लेकर चला गया । उसने महाश्वेता को पुण्डरीक से पुनर्मिलन का विश्वास दिलाया और प्राणत्याग न करने के लिए कहा । कपिंजल भी उसका पीछा करता हुआ आकाश में उड़ गया।

महाश्वेता ने बताया कि गन्धर्व चित्ररथ की पुत्री कादम्बरी उसकी सखी है । उसने निश्चय किया है कि जब तक महाश्वेता शोकावस्था में रहेगी, तब तक वह अपना विवाह नहीं करेगी। फिर वह चन्द्रापीड को लेकर कादम्बरी से मिलने उसके वास-स्थान हेमकूट गयीं। महाश्वेता ने कादम्बरी से चन्द्रापीड का परिचय कराया। कादम्बरी ने चन्द्रापीड को 'शेष' नामक दिव्य हार उपहार में दिया और साथ ही अपना हृदय भी अर्पित कर दिया। कुछ दिन वहां रहकर चन्द्रापीड और महाश्वेता वापस अच्छोद सरोवर के समीपस्थ आश्रम में लौट आए। कुछ दिन बाद कादम्बरी का सन्देश-वाहक केयूरक वह हार लेकर आया जो चन्द्रापीड वहीं छोड़ आया था। उसने

कादम्बरी की कामावस्था को भी चन्द्रपीड से निवेदित कर गया। तब चन्द्रपीड पत्रलेखा के साथ पुनः हेमकूट गया और पत्रलेखा को वही छोड़कर वापस आ गया। पिता तारापीड का सन्देश पाकर चन्द्रपीड ने वैशम्पायन को सेना समेत आने के लिए कहकर स्वयं इन्द्रायुध पर सवार हो, शीघ्र उज्जयिनी पहुँच कर माता-पिता के दर्शन किये। कुछ दिनों बाद पत्र- लेखा आयी। उसने कादम्बरी और महाश्वेता का हाल बताकर चन्द्रपीड से कहा कि उसने कादम्बरी से आपको मिलाने का वचन दिया है। (यहां तक बाण-रचित कादम्बरी का पूर्वभाग समाप्त होता है और आगे भूषणभट्ट द्वारा लिखित कादम्बरी उत्तरभाग की कथा आरम्भ होती है)।

मेघनाद के साथ केयूरक और पत्रलेखा को पुनः कादम्बरी के पास जाने के लिए रवाना करके चन्द्रापीड स्वयं दशपुर तक आयी सेना के साथ आ रहे अपने मित्र शुकनासपुत्र वैशम्पायन से मिलने चले पड़ा। किन्तु स्कन्धावार में वैशम्पायन को न पाकर बहुत दुःखी हुआ। बाद में पता लगा कि वैशम्पायन तो अच्छोद सरोवर पर ही रह गया। तब चन्द्रापीड वापस उज्जयिनी आया और तारापीड तथा शुकनास से यह वृत्तान्त बताकर वैशम्पायन को खोजने शीघ्रतापूर्वक अच्छोद सरोवर पहुँचा। वहाँ उसे न पाकर जब उसने महाश्वेता से उसके बारे में पूछा तो उसने रोते हुए बताया कि वह ब्रह्मण युवक आया था और वह हठपूर्वक मुझसे प्रणय निवेदन कर रहा था। मेरे निषेध करने पर भी जब उसने अपनी रट नहीं छोड़ी तो मैने उसे शुक हो जाने का शाप दे दिया। वह निष्प्राण हो गिर पड़ा बाद में मुझे ज्ञात हुआ कि वह आपका मित्र था। इतना सुनते ही चन्द्रापीड का हृदय विदीर्ण हो गया और वह भी निष्प्राण हो धराशायी हो गया। उस समय कादम्बरी भी महाश्वेता क आश्रम पर पहुँच गयी ओर चन्द्रापीड को मरा देखकर व्याकुल हो विलाप करने लगी। उसी समय चन्द्रापीड के शरीर से एक ज्योति निकली और आकशवाणी हुई कि चन्द्रापीड का शरीर सुरक्षित रखना। उससे कादम्बरी का समागम अवश्य होगा। तत्काल बाद पत्र-लेखा, इन्द्रायुध को लेकर अच्छोद सरोवर में कूद गयी। कुछ देर बाद अच्छोद सरोवर से कपिंजल निकल कर बाहर आया उसने महाश्वेता को चन्द्रमा और पुण्डरीक के शाप-प्रतिशाप की कथा बतायी। उसने यह भी बताया कि उस समय आकाशमार्ग से जाते हुये एक, क्रोधी वैमानिक का उल्लंघन कर दिया था तो उसने मुझे अश्वयोनि में जाने का शाप दे दिया। बाद में उसने मुझे बताया कि चन्द्रदेव ही तारापीड के पुत्र चन्द्रापीड होंगे और पुण्डरीक उनका मित्र वैशम्पायन होगा। तुम चन्द्रापीड का वाहन बनोगे और चन्द्रापीड की मृत्यु के पश्चात् जब तुम स्नान कर लोगों तो मेरे शाप से मुक्त होकर पुनः कपिंजल हो जाओगे। उसने प्रणय निवेदन करने वाला वैशम्पायन ही पुण्डरीक था-यह जानकर महाश्वेता विलाप करने लगी। कपिंजल ने उसे आश्वस्त किया तथा चन्द्रापीड, वैशम्पायन और पत्रलेखा के पुनर्जन्म का पता लगाने श्वेतकेतु मुनि ने यहां चला गया। दूतों से यह वृत्तान्त जानकर तारापीड अपने परिजनों के साथ अच्छोद सरोवर पर जा पहुँचे और चन्द्रापीड के सुरक्षित शरीर को देखकर आश्वस्त हुए। इतनी कथा सुनकर महर्षि जाबालि ने कहा कि महाश्वेता के शाप के कारण शुक-योनि में जन्मा यह शावक ही वैशम्पायन है। फिर शुक-शावक ने महाराज शूद्रक को बताया कि कपिंजल मुझे ढूँढता हुआ जाबालि-आश्रम में आया था और पिता श्वेतकेतु की कुशलता बता गया था, जब

मैं उड़ने योग्य हो गया था तो एक दिन उत्तर दिशा की ओर जाते हुए एक व्याध के जाल में फँस गया और आज स्वर्ण-पिंजरे में इस चाण्डाल कन्या ने मुझे श्रीमान् के चरणों में पहुँचा दिया है। शुक-शावक की बातें सुनकर महाराज शूद्रक ने चाण्डाल-कन्या को बुलवाया। उसने आकर कहा कि महाराज आपने इसके पूर्वजन्म का वृत्तान्त सुन ही लिया है । अब इसके शाप की निवृत्ति सन्निकट है । मैं ही इसकी माता लक्ष्मी हूँ । आप चन्द्रापीड हैं और यह वैशम्पायन अर्थात् पुण्डरीक है। अब शाप की समाप्ति के बाद आप दोनों सुखपूर्वक साथ-साथ रहेंगे। इतना कह क रवह आकाश में उड़ गयी । तब शूद्रक को भी अपने पूर्व-जन्म का स्मरण हो आया । उधर महाश्वेता के आश्रम पर बसन्त के आगमन के साथ ही कादम्बरी ने चन्द्रापीड के शरीर को अलंकृत कर उसका आलिंगन किया । चन्द्रापीड जीवित हो गया । पुण्डरीक भी कपिंजल के साथ गगन तल से उतर आया। तारापीड, विलासवती, शुकनास, मनोरमा, चित्ररथ, हंस आदि सभी आनन्दित हो गये। कादम्बरी का चन्द्रापीड के साथ और महाश्वेता का पुण्डरीक के साथ विवाह हो गया और सभी सुखपूर्वक रहने लगे।

4.4.3 कादम्बरी के पात्रों का परिचय

शूद्रकः-संस्कृत वाड्.मय में 'शूद्रक' एक बहुचर्चित नाम हैं। पुराणों से लेकर लौकिक संस्कृत-काव्यों से इसे अनेकत्र राजा के रूप में चित्रित किया गया है। इसे 'मृच्छकटिक' नामक रूपक का कर्त्ता भी कहा गया है। इसके नाम से अन्य रचनायें भी प्राप्त होती है।

कादम्बरी-कथा का आरम्भ ही शूद्रक के उल्लेख (आसीत्.................राजा शूद्रकों नाम) से होता है । वह विदिशा का शासक और चन्द्रापीड का अवतार है । उसकी सभा शुकनास जैसे विशुद्ध आचरण वाले विद्वान ब्राह्मण मन्त्रियों से सुशोभित थी। वह अमित पराक्रमशाली और अप्रतिहत शक्तिसम्पन्न था । सभी राजा सिर झुका कर उसकी आज्ञा का पालन करते थे । जितेन्द्रिय था और सदाचार, धार्मिक तथा यज्ञों का अनुष्ठाता था । शास्त्रज्ञ और साथ ही काव्यज्ञ भी था। प्रजापालक और विद्वानों का समादरकर्ता था। वह गुणग्राही था। वैशम्पायन शुकशावक द्वारा उच्चारित आर्या-''स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ती हृदयशोकाग्नेः। चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम् ।'' सुनकर आश्चर्य चकित हो जाता है। प्रशंसा करता हुआ अपने मन्त्री कुमारपालित से कहता है-''श्रुता भवद्भिरस्य विहंगमस्य स्पष्टता वर्णोच्चारणे स्वरे च मधुरता।''

तारापीड - तारापीड उज्जयिनी के सम्राट हैं। वे चन्द्रापीड के पुत्रवत्सल पिता और महारानी विलासवती के प्रणयी पति हैं। वे धर्म के अवतार और पमरेश्वर के प्रतिनिधि हैं। वे कामदेव के समान शोभासम्पन्न हैं । वे एक योग्य शासक के सभी गुणों से सम्पन्न हैं तथा कौटुम्बिक सम्बन्धों के प्रति भी अत्यन्त संवेदनशीलता हैं। विलासवती के साथ वे भी सन्तान सुख न पाने से दुःखी है तथा पत्नी का प्रसादन करते है । वे उसे कर्म और भाग्य का भरोसा दिलाकर आश्वस्त करते हैं तथा देव, गुरु और अतिथि के समाराधन सपर्या का सुझाव देते हैं। वे पुण्य और पाप को अच्छी तरह समझते हैं तथा अनजान में भी अपने द्वारा अपराध न होने देने के लिए

सचेष्ट रहते हैं। तारापीड दैव के विधान से उद्विग्न नहीं होते। उनमें गाम्भीर्य, दृढ़ता और मृदुता, हृदय की विशालता और उदारता ये सब कुछ हैं आदर्शसम्राट के सभी गुणों उनमें मूर्तिमान है। वे अपने कर्तव्य का निर्वाह बड़ी कुशलता से करते हैं । उनका चरित्र अत्यन्त पवित्र और अनुकरणीय है।

चन्द्रापीड

चन्द्रापीड कादम्बरी कथा का नायक है। वह धीरोदात्त नायक है। लक्षण ग्रन्थों में इस कोटि में रखे गये नायक के जो गुण-महासत्त्व, अत्यन्त गम्भीर प्रकृति, क्षमावान्, आत्मश्लाघा से रहित, अचलबुद्धि, विनम्र, दृढ़संकल्पवान्-कहे गये हैं, वे सभी चन्द्रापीड में पाये जाते हैं । चन्द्रापीड चन्द्रदेव का अवतार है। उसने उच्च राजर्षिकुल में जन्म लिया है। वह मनोहर कलेवर, काला बुद्धिमान, स्नेही और पराक्रमी है। स्वाभाविक जिज्ञासा से भरा हुआ है। किन्नर युगल का पीछा करते हुए अच्छोद सरोवर तक पहुँच जाता है और फिर वहां शिवाराधन में तल्लीन वीणा वादिनी एकाकिनी कन्या को देखकर कुतूहल भरी जिज्ञासा होती है । बाल्यावस्था में उसने आचार्यों के चरणों में बैठकर अनेक शास्त्रों और विद्याओं का अध्ययन किया था । उसने व्याकरण, मीमांसा, तर्कशास्त्र, राजनीति, मल्लविद्या, नृतयशास्त्र चित्रकर्म, आयुर्वेद, धनुर्वेद, वस्तुविद्या, नाटक, कथा, आख्यायिका, काव्य आदि में अध्ययन एवं अभ्यास द्वारा कुशलता अर्जित की थी। वह अत्यनत धैर्यवान् है- 'अहो बालस्यापि सतः कठोरस्येव ते मह्दधैर्यम्।'' उसमें गुरुजनों के प्रति असाधरण श्रद्धा एवं भक्ति है। शुकनास का उपदेश पाकर वह अपने को धन्य मानता है।-''उपशान्त वचसि शुकनासे चन्द्रापीडस्ताभिरूपदेशवाग्भिः प्रक्षालित इव, उन्मीति इव, स्वच्छीकृत इव, निर्मष्ट इव, अभिषिक्त इव, अलंकृत इव, पवित्रीकृत इव, उद्भासित इव, प्रीतहृदयो मुहूर्त स्थित्वा स्वभवनमाजगाम।'' वह अपने गुरुजन का सम्मान करता है। माता-पिता की पाद वन्दना करता हैं मन्त्री शुकनास का अभिवादन करता है और उनके समक्ष भूमि पर बैठता है। शिष्टाचार का वह जंगम स्वरूप ही है। अपने परिजनों का भी यथोचित आदर करता है। इन्द्रायुध अश्व को देखकर उसके विस्मय की सीमा नहीं रहती। वह मन ही मन कहता है-''महात्मन्! आप चाहे जो भी हों, मैं आपको प्रणाम करता हूँ। मेरे आरोहण की धृष्टता को क्षमा कीजिए। अज्ञात देवता भी अनुचित अनादर के भाजन हो जाते हैं।''

वह दूसरों की इच्छाओं का सदैव ध्यान रखता है। महाश्वेता के आग्रह पर वह हेमकूट जाने के लिए तैयार हो जाता है। उधर से लौटकर आने पर पिता के बुलाने पर शीघ्रतापूर्वक उज्जयिनी के लिए प्रस्थान कर देता है। चन्द्रापीड परिहास कुशल भी है। कादम्बरी में उसके हास्य-व्यंग्य के अनेक प्रशंसा प्राप्त होते हैं । चन्द्रापीड एक आदर्श मित्र और सखा है । 'सुहृद्' शब्द की अन्वर्थकता उससे ही है। वह मैत्री के पवित्र सम्बन्ध का प्रयत्नपूर्वक निर्वाह करता है। महाश्वेता के साथ उसकी मैत्री अत्यन्त पवित्र है। महाश्वेता द्वारा यह बताने पर कि वैशम्पायन को उसने शुक होने का शाप दे दिया है, वह महाश्वेता को कुछ नहीं कहता। उज्जयिनी में यह संवाद पाते ही कि वैशम्पायन सेना के साथ नहीं है, पीछे छूट गया है; वह तुरन्त ही वैशम्पायन के ढूँढ निकालने के लिए चल पड़ता है। वैशम्पायन उसका बालसखा हैं महाश्वेता द्वारा शापग्रस्त

होकर उसकी मृत्यु का संवाद सुनते ही उसका हृदय विदीर्ण हो गया और वह भी निष्प्राण हो गया । सच्ची मित्रता का यह अनुपम निदर्शन है ।

चन्द्रपीड यथार्थतः प्रेमी है । वह कादम्बरी को हेमकूट में देखकर उसके प्रति आकृष्ट होता है । उसकी अनुरागमयी स्मृति अपने हृदय में सदैव बनाये रखता है । अभी वह हेमकूट से महाश्वेता के आश्रम में आया ही था कि कादम्बरी की अस्वस्थता का हाल जानकर पुनः अविलम्ब पत्रलेखा के साथ कादम्बरी को देखने जाता है और पत्रलेखा को कादम्बरी के पास ही छोड़ कर वापस होता है । कुलूतेश्वर की राजकन्या पत्रलेखा (नवयुवती सुन्दरी) विलासवती के द्वारा, चन्द्रापीड नवयुवक राजकुमार की ताम्बूलकरंकवाहिनी बनायी गयी । वह चन्द्रापीड की अतिविश्वासपात्र हो गयी किन्तु कादम्बरी में कहीं भी चन्द्रापीड का उसके प्रति आकर्षण संकेतित नहीं है । इस पर कुछ समीक्षकों ने चन्द्रापीड को निष्ठुर और हृदयहीन कहा है । किन्तु चन्द्रापीड पर ऐसा आक्षेप करना उचित नहीं है वह एक आदर्श भारतीय युवक है और धर्माविरुद्ध काम की मर्यादा का पालन करने वाला है । इस प्रकार, चन्द्रापीड को बाणभट्ट ने इस महनीय कालजयी कथा के आदर्श नायक के रूप में प्रस्तुत किया है ।

शुकनास

सदाचारी ब्राह्मणों के कुल में उत्पन्न शुकनास, उज्जयिनी के सम्राट तारापीड का मन्त्री है । वह शास्त्रों का मर्मज्ञ वेत्ता है और नीतिशास्त्र के सम्यक् प्रयोग में अत्यन्त निपुण है । वह राजा का अत्यन्त विश्वास पात्र और सम्मान भाजन है । वह प्रजा के कल्याण के लिए सतत निरत रहता है । विपत्काल में भी उसकी प्रज्ञा तनिक भी मलिन नहीं होती और स्थिर चिन्तन में समर्थ रहती है । वह धैर्य का धाम, मर्यादा का स्थान, सत्य का दृढ़ सेतु, गुणों का गुरु और आचारों का आचार्य हैं चन्द्रापीड के यौवराज्याभिषेक के अवसर पर चन्द्रपीड को उसके द्वारा प्रदत्त उपदेश संस्कृत साहित्य की अनुपम अमूल्य निधि होने के साथ ही एक शासक के लिए उसके धर्म-कर्म की आदर्श आचार संहिता है । शुकनास परिस्थितियों का ठीक-ठीक आकलन करता है और कालोचित निर्णय लेता है । वह राजा को सदैव सत्यपरामर्शदेता है । शुकनास के विचार अत्यन्त पवित्र और दृष्टि सर्वथा निर्मल है । उसके लिए अपने-पराये में कोई भेद नहीं है । शुकनास एक योग्य शासक का सुयोग्य मन्त्री है ।

वैशम्पायन

वैशम्पायन पुण्डरीक का अवतार है जो महाश्वेता के शाप से शुक की योनि में उत्पन्न होता है जिसे उसकी माता लक्ष्मी, चाण्डालकन्या के रूप में स्वर्णपिंजर में लेकर शूद्रक की सेवा में उपस्थित होती है । वैशाम्पायन, पूर्व जन्म में महामुनि श्वेतकेतु का पुत्र होने के कारण सदाचार सम्पन्न संस्कारवान् और शास्त्रज्ञ है । शुकनासपुत्र वैशम्पायन के रूप में वह चन्द्रापीड का बाल सखा है और उसने उनके साथ ही विद्याध्ययन किया है । वह सदैव चन्द्रापीड का अनुगामी रहता है ।

पुण्डरीकः -महामुनि श्वेतकेतु और लक्ष्मी का पुत्र मुनिकुमार पुण्डरीक है । मुनिवृत्ति के प्रतिकूल

कामुकता इसके अन्दर भरी हुई है । यही कारण है कि महाश्वेता को देखते ही वह उस पर आसक्त हो जाता है और अपनी सुध-बुध खो बैठता है । उसका मित्र कपिञ्जल उसे लाख समझाता है किन्तु उसका कोई प्रभाव उस पर नहीं पड़ता, पलटे वह उसी पर खीझने लगता हैं पुण्डरीक की सुन्दरता अवर्णनीय है।

विलासवती- उज्जयिनी-नरेश तारापीड की महारानी विलासवती है । वह निःसन्तानता की असह्य पीड़ा से अत्यन्त दुःखित होती है । अपने पति महाराज तारापीड के समझाने पर गुरुजनसेवा और देवाराधन में तत्पर होती है। फलतः उसे चन्द्रमा के समान सुन्दर पुत्र प्राप्त होता है। उसका नाम चन्द्रापीड रखा जाता है। पुत्र के प्रति जो स्वाभाविक वत्सलता माँ में होती है, विलासवती में उससे कहीं अधिक है क्योंकि अनेक व्रतानुष्ठानादि पुण्य उपायों से पुत्र-प्राप्ति हुई है। चन्द्रापीड विलासवती का एकमात्र पुत्र है। आचार्य कुल में चन्द्रापीड के भेजे जोने का वह भरसक प्रयत्न करती हैं। इस विषय में वह अपने पति को कठोर हृदय कहती है। विलासवती पति परायण का आदर्श भारतीय स्त्री है । लज्जा उसका सहज अलंकरण है । वह एक आज्ञाकारिणी भार्या है, पुत्रवत्सला माता है तथा उदार गृहिणी है।

महाश्वेता- चन्द्रापीड ने अच्छोद सरोवर पर शिवायतन में वीणावादनपूर्वक भगवान् शिव की आराधन करती हुई जिस अनिन्द्य सुन्दरी कन्या को देखा था, उसका नाम 'महाश्वेता' है । महाश्वेता कठोर व्रत और तपश्चर्या का मनो जीवित विग्रह है। उसका चरित एवं चरित्र सर्वथा निर्मल है। यथार्थनामा गौरवर्णा महाश्वेता के शरीर से चतुर्दिक प्रभामण्डल का विस्तार हो रहा है मानो सुदीर्घकाल से राशीभूत तपःप्रभा ही विकीर्ण हो रही है । समीपवर्ती वनप्रान्त को वह अपनी कान्ति से धवल बना रही है। वन्य पशु पक्षी भी उसके सान्निध्य से वीणा की स्वरलहरी का आनन्द ले रहे हैं। चन्द्रापीड महाश्वेता के दिव्य सौन्दर्य को देखकर विस्मित हो उठा।

जिस तरह महाश्वेता का शरीर श्वेताभ है उसी तरह सका अन्तःकरण भी नितान्त निष्कलुषहै। वह निर्मत्सर, निरहंकार और विनय की पराकोटि में स्थित है । वह सदाचार की प्रतिमूर्ति है। चन्द्रापीड को देखते ही बोल पड़ती है-''अतिथि का स्वागत है। महाभाग इस स्थान पर कैसे आ पहुँचे? तो आइए अतिथि सत्कार स्वीकार कीजिए ।'' विनम्र और निश्छल व्यवहार से उसके हृदय की उदारता झलकती हैं अपरिचित पुरुष-अतिथि से भी वह इस प्रकार निवेदन करती है जैसे वह उससे चिरपरिचित हो। महानुभाव चन्द्रापीड के द्वारा उसके विषय में पूछने पर वह रोने लगती है। उसका सन्ताप उसके कोमल हृदय को पिघला देता है। वह निःसंकोच अपना सारा वृत्तान्त चन्द्रापीड से कह डालती है । पुण्डरीक नामक मुनिकुमार के दर्शनमात्र से ही वह उसे अपना हृदय दे देती हैं स्तम्भित सी, लिखित सी, उत्कीर्ण सी ऐसी अनिर्वचनीय दशा में पहुँची हुई वह बहुत देर तक अपलक पुण्डरीक को निहारती रहती है -

'तत्कालाविर्भूतेनावष्टम्भकेन अकथितषिक्षितेनानायेयेन, स्वसंवेद्येन, केवलं न विभाव्यते किं तद्रूपसम्पदा, किं मनसा, किं मनसिजेन, किमभिनवयौवनेन, किमनुरागेणैवोपदिष्यमानं, किमन्येनैव वा केनापि प्रकारेण, अहं न जानामि, कथं कथमिति तमतिचिरं व्यलोकयम् ।'

पुण्डरीक भी काम के वशीभूत हो जाता है। महाश्वेता अपनी माँ के बुलाने पर किसी-किसी तरह अच्छोद सरोवर में स्नान करके उसके साथ वापस घर जाती है। कपिंजल, महाश्वेता के घर जाकर पुण्डरीक की विषमावस्था का वर्णन करता है। महाश्वेता पुण्डरीक से मिलने जाती है किन्तु उसके पहुँचने से पूर्व ही पुण्डरीक का प्राणान्त हो जाता है। महाश्वेता विलाप करने लगती है। दिव्य पुरुष के आश्वासन पर विश्वास करके वह पुण्डरीक से पुनः मिलने की आशा बाँधे तपश्चर्या करने लगती है। भारतीय नारी के निरवद्य प्रतिमान के रूप में महाश्वेता हमारे समक्ष आती है। उसमें निश्चिल और निश्छल प्रेम की पराकाष्ठा दिखायी पड़ती है। एक बार पुण्डरीक को अपने हृदय में बैठा लेने पर फिर उससे मिलने की आशा में निरवधि प्रतीक्षा के कठिन व्रत का पालन करती है। दिव्य पुरुष के वचन ओर आकाशवाणी पर उसे पूर्ण विश्वास हैं चन्द्रापीड के साथ उसका सहज मैत्री भाव उसके हृदय की उदारता है। एकान्त शिवाराधन, ईश्वर के प्रति उसकी असीम श्रद्धा का परिचायक है। कादम्बरी उसकी अत्यन्त प्रिय सखी है। चन्द्रपीड, को साथ लेकर वह उसका हाल जानने उसके घर जाती है और चन्द्रापीड-कादम्बरी के मध्य प्रणय-सेतु का कार्य करती है।

पुण्डरीक के प्रति उसकी इतनी दृढ़ प्रीति है कि उसके अतिरिक्त वह किसी का नाम भी इस विषय में लेना पसन्द नहीं करती। वैशम्पायन उसे देखते ही उस पर आसक्त हो जाता है और बार-बार प्रणय याचन करता है। इस पर क्रुद्ध होकर वह उसे शुक योनि में जन्म लेने, का शाप दे देती है। बाद में यह जानकर कि यह चन्द्रापीड का मित्र था-पश्चाताप भी करती है। ये सारी चारित्रिक विशेषतायें महाश्वेता को अत्यन्त उच्च स्थान प्राप्त कराती हैं। महाश्वेता गम्भीर भाव और सरल वचन वाली है। वह उदारता, शुचिता त्याग, तपस्या ओर प्रीति की एकत्र भास्वर राशि है-

कादम्बरी- कादम्बरी हेमकूट पर निवास करने वालो गन्धर्वराज चित्ररथ की पुत्री (कन्या) है। यह बाणविरचित 'कादम्बरी' कथा-ग्रन्थ की नायिका है। बाण ने अपनी नायिका के नाम पर ही इस कथाग्रन्थ का यथार्थ नामकरण कादम्बरी किया है-

'कादम्बरीरसभरेण समस्त एव मत्तो न किंचिदपि चेतयते जनोऽयम्।' वस्तुतः नायिका कादम्बरी में जो रूपसौन्दर्य की मादकता और प्रीतिमाधुर्य का जो उल्लास है वह हूबहू कादम्बरी कथा में भी है। एक महाकवि की उदात्त कल्पना है और दूसरी उसकी आलंकारिक अभिव्यक्ति। कादम्बरी कन्या मुग्धा, परकीया कोटि की नायिका है। कथा में महाश्वेता-वृत्तान्त के पश्चात् कादम्बरी की कथा आती है। वह सहानुभूति और त्याग की प्रतिमूर्ति के रूप में पाठकों के सम्मुख प्रस्तु की जाती है। वह महाश्वेता की अतिप्रिय सखी है। उसने प्रतिज्ञा कर ली है कि जब तक महाश्वेता का मिलन 'पुण्डरीक' से नहीं हो जाता, वह अपना विवाह नहीं करेगी। महाश्वेता ने उसे समझाया भी किन्तु वह इस विषय में अविचलित रहती है।

नारी-सौन्दर्य का एक दिव्य परिवेश कादम्बरी से निसर्गतः सम्पृक्त है। उसमें प्रीति की अनुपम विच्छित्ति है, भावों की प्रौढि है, जीवन का आदर्श है, लौकिक व्यवहारों के प्रति नैष्ठिक चेतना है, मैत्रीनिर्वाह के लिए असीम धैर्य है, स्नेह की सरल तरलता है, तपश्चर्या की दृढ़ता है व मानवीय संवेदनाओं की मनोरम मूर्ति है। कादम्बरी का अनुभव प्रथम दर्शन में ही चन्द्रापीड को

प्रभावित कर उस पर अमिट छाप छोड़ देता है।

चन्द्रापीड को देखकर कादम्बरी के मन में कामवेदना का संचार हो जाता है। जब वह ताम्बूल देने के लिए चन्द्रापीड की आगे अपना हाथ बढ़ाती है, तो साध्वसभाव के कारण उसके अंगों में कम्पन उत्पन्न हो जाता है। उसकी आँखों में आकुलता व्याप्त हो जाती है और सारा शरीर पसीने से नहा उठता है। उसे पता भी नहीं चलता कि उसके हाथ से रत्न वलय गिर गया है।

यद्यपि कादम्बरी ने यह प्रतिज्ञा की थी कि जब तक पुण्डरीक से महाश्वेता का मिलन नहीं हो जाता, वह अपना विवाह कथमपि नहीं करेगी किन्तु चन्द्रापीड को देखते ही वह कामदेव के बाणी से बिंध जाती है। चन्द्रापीड प्रथम दर्शन में ही उसके हृदयराज्य का अधिपति बन जाता है। महाश्वेता के पूछने पर कि चन्द्रापीड कहाँ ठहरेंगे? कादम्बरी कहती है कि जबसे इनके दर्शन हुए है तभी से परिजन और भवन की क्या बात, ये तो मेरे तन-मन के भी स्वामी हो गये है। आपको अथवा इनको जहाँ भी अच्छा लगे, वहीं रहें। कादम्बरी मर्यादा का पालन करना अच्छी तरह जानती है। विनम्रता और लज्जा, उसका सहज गुण है। यद्यपि वह चन्द्रापीड की ओर आकृष्ट है फिर भी अपने इस आचरण से उसे क्षोभ है-

'अगणितसर्वषया तरलहृदयां दर्शयन्त्याद्य मया किं कृतमिदं मोहान्धया ? तथा हि, अदृष्टपूर्वोऽयमिति साहसिकता मया न संचितम् लघुहृदयां मां कलयिष्यतीति निशंकया नाकलितम्। कास्य चित्तवृत्तिरिति मया न परीक्षितम्। दर्शनानुकूलाहमस्य नेति वा तरलया न कृतो विचारक्रमः।

गुरुजन के प्रति आदर एवं श्रद्धा तथा प्रियजन के प्रति स्नेह और सहानुभूति कादम्बर के चरित्र की विशेषता हैं वह अपनी सखी (अथवा सुहृद्) के दुःख और सुख से सुखी होती है। महाश्वेता के प्रति उसके हृदय में अगाध सम्मान और प्रीति है। बाण ने कादम्बरी को एक आदर्शसखी तथा प्रेमिका के रूप में चित्रित किया है।

पत्रलेखा- पत्रलेखा 'कादम्बरी' की एक महत्वपूर्ण स्त्रीपात्र है। यह चन्द्रापीड की ताम्बूल करंकवाहिनी नियुक्त है। यह कुलूतेश्वर की पुत्री है जो महाराज उज्जयिनी नरेश के द्वारा कुलूत की राजधानी जीतकर इसे भी बन्दिनी बनाकर अन्तःपुर में रखा गया था। एक अनाथ राजदुहिता होने के कारण पत्रलेखा के प्रति महारानी विलासवती की अत्यन्त स्नेह हो गया और वे उसे अपनी कन्या के समान मान देने लगीं थी, जब चन्द्रापीड अध्ययन समाप्त कर राज भवन लौट और युवराज पद पर अभिषिक्त हुए, उसी बीच महारानी ने अपने प्रिय पुत्र की सेवा में अपनी दुहिता तुल्य पत्रलेखा को कंचुकी की साथ भेजा। चूँकि चन्द्रापीड पत्रलेखा के कुलशील से परिचित न था अतः महारानी ने पत्रलेखा के विषय में सविस्तार सन्देश चन्द्रापीड को दिया था। पत्रलेखा राजकन्या होते हुए भी दुर्भाग्य से दासी बनी। वह अनिन्द्य सुन्दरी थी और चन्द्रापीड की रात दिन की संगिनी थी। वह चन्द्रापीड की प्रिय विश्वासप्रात्र थी किन्तु बाण ने कहीं भी इन दोनों के बीच काम विकास का संकेत भी नहीं किया है। कुछ समीक्षकों ने महाकवि बाण की अन्धदृष्टि की कटु आलोचना की है किन्तु बाण मर्यादित प्रेम का चित्रण करने वाले कवि है। उन्होंने परिचारिका के रूप में पत्रलेखा के उदात्त चरित्र का सुन्दर चित्रण किया है।

4.4.4 कादम्बरी का कला एवं हृदय पक्ष

बाण की कादम्बरी में प्रकृति के सौम्य तथा उग्र रूप का वर्णन जितना रोचक है, उतना ही रोचक है उसके नाना वस्तुओं का वर्णन है। वर्णनों को संश्लिष्ट तथा प्रभावोत्पदक बनाने के लिए, भावों में तीव्रता प्रदान करने के हेतु बाण ने उपमा, उत्प्रेक्षा, श्लेष, विरोधाभास आदि अलंकारों का बड़ा ही सुन्दर प्रयोग किया है, परन्तु 'परिसंख्या' अलंकार के तो वे सम्राट् प्रतीत होते हैं। बाण के समान किसी अन्य कवि ने 'श्लिष्ट परिसंख्या' का इतना चमत्कारी प्रयोग शायद ही किया हो। इन अलंकारों के प्रयोग ने बाण के गद्य में अपूर्व जीवनी-शक्ति डाल दी है। आदर्श गद्य के जिन गुणों का उल्लेख बाण ने हर्ष चरित में किया है वे उनके गद्य में विशदतया वर्तमान है-

नवोऽर्थो जातिग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः।
विकटारक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुर्लभम् ।।

अर्थ की नवीनता, स्वाभावोक्ति की नागरिकता, श्लेश की स्पष्टता, रस की स्फुटता, अक्षर की विकटबन्धता का एकत्र दुर्लभ सन्निवेश कादम्बरी को मंजुल रसपेशल बनाये हुए है। उनके श्लेष-प्रयोग जूही की माला में पिरोये गये चम्पक पुष्पों के समान मनमोहक होते हैं- निरन्तरश्लेषघनाः सुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव। 'रसनोपमा' का यह उदाहरण कितना मनोरम है-क्रमेण च कृतं में वपुषि वसन्त इव मधुमासेन, मधुमास इव नवपल्लवेन, नवपल्लव इव कुसुमेन, कुसुम इव मधुकरेण, मधुकरेण इव मदेन नवयौवनेन पदम्।

कादम्बरी में हृदयपक्ष का प्राधान्य है। कवि अपने पात्रों के अन्तस्तल में प्रवेश करता है, उनकी अवस्था-विशेष में होने वाली मानस वृत्तियों का विश्लेषण करता है तथा उचित पदन्यास के द्वारा उसकी अभिव्यक्ति करता है। पुण्डरीक के वियोग में महाश्वेता के हार्दिक भावों की रम्य अभिव्यक्ति बाण की ललित लेखनी का चमत्कार हैं चन्द्रापीड के जन्म के अवसर पर राजा तथा रानी के हृदयगत कोमल भावनाओं का चित्रण बड़ा ही रमणीय तथा तथ्यपूर्ण हुआ है। चन्द्रापीड के प्रथम दर्शन के अनन्तर स्वदेश लौट आने पर कादम्बरी के भावों का चित्रण कवि के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का सुन्दर निदर्शन है। बाण की दृष्टि में प्रेम भौतिक सम्बन्ध का नामान्तर नहीं है, प्रत्युत वह जन्मान्तर में समुद्भूत आध्यात्मिक संबंध का परिचायक है। कादम्बरी 'जन्मान्तरसौहृदय' का सजीव चित्रण हैं विस्मृत अतीत था जीवित वर्तमान को स्मृति के द्वारा एक सूत्र में बाँधनेवाली यह प्रणयकथा हैं बाणभट्ट ने दिखलाया है कि सच्च प्रेम कुल और समाज की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करता। वह संयत तथा निष्काम होता है। काल की कराल छाया न उसे आक्रान्त कर सकती है, न काल का प्रवाह उसकी स्मृति को मलिन और धुँधला बना सकता है। महाश्वेता तथा पुण्डरीक का, कादम्बरी तथा चन्द्रापीड का अनेक जन्मों में अपनी चरितार्थ तथा सिद्धि प्राप्त करनेवाला प्रेम इस आदर्श प्रणय का सच्चा निदर्शन है।

4.5 सारांश

बाणभट्ट की काव्य प्रतिभा एवं उनका गद्य वैशिष्ट्य तथा उनका प्रकृष्ट पाण्डित्य, समस्त संस्कृत साहित्य में उनके व्यक्तित्व को गरिमामय बनाता है। अपनी कृति कादम्बरी तथा

हर्षचरित के द्वारा उन्होंने संस्कृत कथा एवं आख्यायिका दोनों साहित्यों में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया हैं जिसका बृहत् रूप आप अपनी समक्ष मेधा द्वारा ग्रहण कर सकते है। इस इकाई में बाणभट्ट का समय, कृतियां, एवं उनके विविध रूपों को यथा स्थान रखा गया है जिसके अध्ययन से आप बाणभट्ट के विषय में समग्र जानकारी एक स्थान पर प्राप्त कर सकेगें।

4.6 शब्दावली

ब्राह्मणोचित्त	ब्राह्मण के अनुरूप
प्रगल्भता	वाक्य चातुर्य
भावानुरूप	भाव के अनुरूप
कुशस्थल	कान्यकुब्ज
कुतूहल	बेचैनी
संध्याकालिक	संध्या के समय
ताम्बूलकरंकवाहिनी	पान के डब्बा को लेकर चलने वाली

3. बहुविकल्पीय

(अ) चण्डीशतक में श्लोको की संख्या क्या है?

(क) 102 (ख) 99 (ग) 201 (घ) 120

(ब) कादम्बरी कथा का मूलस्रोत क्या है?

(क) दशकुमार चरितम् (ख) जातकथा (ग) वृहद्कथा (घ) महाभारत

(स) चन्द्रापीड राजकुमार था-

(क) विदिशा (ख) उज्जैनी (ग) कन्नौज (घ) हस्तिनापुर

4 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए?

(क) कादम्बरी गन्धर्वराज..की पुत्री थी।

(ख) बाण भट्ट के पिता का नाम..था।

(ग) हर्षचरित आठ......................................में विभक्त है।

5. निम्नलिखित वाक्यों में सही वाक्य के समक्ष ( ) का चिन्ह तथा गलत के समक्ष ( ) का

चिन्ह लगाये?

(क) बाणभट्ट की माता का नाम भीमादेवी था। ( )

(ख) शूद्रक प्रीतिकूट का राजा था। ( )

(ग) तारापीड उज्जैनी का राजा था। ( )

4.7 बोध प्रश्नो के उत्तर

3. अ (क) ब (ग) स (ख)

4. (क) चित्ररथ (ख) चित्रभानु (ग) उच्छवास

5 (क) (ग्) (ख) (ग्) (ग) (√)

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कन्हैया लाल पोद्दार, संस्कृत साहित्य का इतिहास
2. डा॰ अमरनाथ पाण्डेय,बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन

4.9 अन्य उपयोगी ग्रन्थ

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास, उमाशंकर शर्माऋषि
2. साहित्य दर्पण, आचार्य विश्वनाथ
3. संस्कृत वांगमय का बृहद्इतिहास: डा॰ बलदेव उपाध्याय

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. बाणभट्ट के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालिए ?
2. कादम्बरी एक कथा है सिद्ध कीजिए ?